सामाजिक विज्ञान के चश्मे से शौचालयों की स्थिति

अंजना त्रिवेदी

भारत में सब तरफ स्वच्छता का हो-हल्ला हो रहा है। शहरों में नम्बर वन होने की होड़-सी लगी है, किन्तु सरकारी स्कूलों में शौचालय की भयावह स्थिति, हमारी कल्पना से परे है।

पिछले पाँच वर्षों में काम के दौरान स्कूल जाने के मौके लगातार मिलते रहे हैं। सरकारी स्कूलों के शिक्षकों से चर्चा करें तो उन्हें सरकार की तरफ से मिले काम के भार की शिकायत रही आती है। ऊपर से ये शिक्षक बच्चों को लेकर भी परेशान रहते हैं कि मजदूर, गरीब, अनपढ़ आदिवासी और कामकाजी परिवारों से बच्चे आ रहे हैं जिनके माँ-बाप पढ़ाई पर ध्यान ही नहीं देते हैं। दूसरी तरफ बच्चे-बच्चियों को स्कूल आते ही अपमानजनक स्थितियों का सामना करना पड़ता है।

बच्चों की स्थिति के कुछ वाकये

एक वाकये के साथ इस बात की शुरुआत करना चाहती हूँ। सरकारी स्कूल की विज़िट के दौरान एक शिक्षिका से मुलाकात हुई। शिक्षिका आठवीं कक्षा में सोशल साइंस पढ़ा रही थीं। उन्होंने कहा, "मेरा नागरिक शास्त्र समाप्त हो गया है, आप बच्चों से कोई भी प्रश्न पूछ सकती हैं जिससे मुझे भी समझ में आए कि बच्चों को नागरिक शास्त्र समझ में आया भी है या नहीं।" मैं बच्चों से बातचीत करने की तैयारी से नहीं गई थी। मैंने यूँ ही प्रश्न किया, "लोक कल्याणकारी राज्य के मायने क्या हैं?" एक छात्र ने उत्तर में कहा, "सरकार हमारे अधिकारों की रक्षा करती है।" दूसरे छात्र ने कहा, "हमारी देखभाल करना।" मैंने फिर प्रश्न किया, "आपकी (हमारी) देखभाल सरकार किस प्रकार से करती है?" एक अन्य बच्ची ने उत्तर में कहा, "सरकार कुछ नहीं करती है।" मुझे समझ में नहीं आया कि इन्हें मेरा पूछा प्रश्न समझ में नहीं आया या मैं इनकी बात समझ नहीं पा रही हूँ। मैंने प्रश्न को पुनः इस तरह पूछा, "लोक कल्याणकारी राज्य में सरकार हमारे लिए कौन-कौन-से कार्य करती है?" प्रश्न रखने के बाद मैंने बात को आगे बढ़ाने में मदद करने के लिहाज़ से कहा, "चलो अपन सब मिलकर सरकार

के कामों की सूची बनाते हैं।" बच्चे बता रहे थे, और मैं ब्लैक-बोर्ड पर लिखती जा रही थीः स्वास्थ्य, शिक्षा, पानी, सड़क, बिजली, स्कूल और शौचालय के नाम की सूची बन गई। मैं बहुत खुश हुई कि बच्चों को यह अध्याय अच्छे से समझ में आ गया है।

मैंने फिर उस बच्ची की ओर इशारा करके पूछा जिसने पहले कहा था कि सरकार कुछ नहीं करती है, "आपने पहले कहा था कि आपके अधिकारों की देखभाल सरकार नहीं करती है, इसके क्या मायने हैं?" बच्ची ने पूरी हिम्मत और आत्मविश्वास के साथ कहा, "देखभाल के अन्तर्गत स्कूल की देखभाल भी तो आती है। हमारे स्कूल में पीने का पानी नहीं मिलता है, और शौचालय है, पर कभी साफ ही नहीं होता है, इतना गन्दा है कि हम उसमें कभी भी नहीं जाते हैं।" मैंने पूछा, "तो फिर ऐसे में आप क्या करते हैं?" बच्चियों ने बताया, "जिनके घर पास में हैं वे ब्रेक में घर चली जाती हैं लेकिन हम तो मेजिक से आते हैं, तो हम पूरी छुट्टी होने पर घर जाने का ही इन्तज़ार करते हैं।" मैं स्तब्ध रह गई। मैंने शिक्षिका की ओर देखा और पूछा, "मेम, आप लोग क्या करते हैं?" उन्होंने बताया, "हमने अपने लिए एक बाथरूम में ताला डलवा दिया है, उस बाथरूम का ही इस्तमाल करते हैं।" तिस पर मैंने प्रश्न किया, "पर बच्चियों के लिए व्यवस्था क्यों नहीं है?" उन्होंने जो बताया वह इस प्रकार है, "रोज़ाना साफ-सफाई मद में स्कूल के पास कोई पैसा नहीं है इसलिए स्कूल इस ओर ध्यान ही नहीं देता है।" मैंने बच्चियों से पूछा, "यदि आपको माहवारी रहती है तो आप क्या करती हैं?" मुझे अच्छा लगा कि बच्चियों ने बिना संकोच, खुलकर बताया, "वैसे तो हमारी माँ ऐसे दिनों में हमें भेजती नहीं हैं, किन्तु टेस्ट या एग्ज़ाम होते हैं तब हमें आना पड़ता है। हम ऐसे ही एक जगह पर बैठे रहते हैं लेकिन बाथरूम नहीं जाते। पानी भी नहीं

पीते कि जाना न पड़े। अगर लगी तो भी अपनी पेशाब दबाकर बैठे रहते हैं।" अन्य बच्चियाँ शर्माते हुए उस बच्ची को मौन समर्थन दे रही थीं।

मैं बिना कुछ बोले कक्षा कक्ष से बाहर आ गई। कक्षा-7 की बच्चियाँ इससे ज़्यादा क्या बोल सकती हैं?

दूसरा वाकया राजधानी के मध्य में स्थित एक अन्य स्कूल का है, जहाँ से वल्लभ भवन और सतपुड़ा मात्र तीन कि.मी. की दूरी पर स्थित है। वहाँ कक्षा में स्थानीय सरकार के अध्याय पर चर्चा हो रही थी। स्थानीय सरकार क्या-क्या कार्य करती है? – सवाल के जवाब में बच्चों ने जो काम बताए वे इस प्रकार हैं – सब काम करती है, जैसे शौचालय बनाती है, स्कूल बनाती है, आँगनवाड़ी खुलवाती है, पानी की व्यवस्था करती है। एक बच्चे ने दबी आवाज़ में कहा, "सब कुछ बड़े लोगों के लिए करती है।" मुझे लगा कि इस मुद्दे पर रुककर बच्चे के नज़रिए को समझना चाहिए। मैंने कहा, "अपने आसपास जो कुछ देखा, वही बताना।" बच्चा डरा, फिर उसने हिम्मत दिखाते हुए कहा, "हमारी बस्ती में पानी नहीं है, किन्तु पास वालों के घरों में पानी आता है। हमारे यहाँ शौचालय नहीं है किन्तु पास के घरों के अन्दर ही शौचालय है। हमारे लिए तो स्कूल में भी शौचालय नहीं है। एक बार जब ज़ोर-से पेशाब आ गई तो मैंने स्कूल के बाहर दुकान के पीछे कर ली, दुकानवाले ने मुझे मारा।" जब बच्चा ये वाकया सुना रहा था तो अन्य बच्चे हँस रहे थे।

सामाजिक विज्ञान विषय के कौशलों को लेकर चर्चा करूँ तो बच्चों में प्रश्न करने, विश्लेषणात्मक चिन्तन और आलोचनात्मक बातचीत करने का कौशल तो विकसित हुआ है, जो इस विषय का ध्येय है पर विचारणीय है कि क्या बच्चे इन कौशलों के तहत बोल रहे थे या अपनी पीड़ादायक स्थिति को बयाँ कर रहे थे?

शिक्षिकाओं के अनुभव

मुझे लगा इस (शौचालय के) मुद्दे पर शिक्षिकाओं से भी चर्चा करनी चाहिए कि इतनी आवश्यक शारीरिक ज़रूरत को वे कैसे पूरी करती हैं। मैंने एक प्राइमरी स्कूल की विज़िट की। स्कूल में घुसते ही पेशाब की बदबू से सामना हुआ। कक्षाओं के भीतर भी यही आलम था। मुझे नाक पर हाथ लगाकर ही अन्दर घुसना पड़ा। मुझे देखते हुए वहाँ बैठी शिक्षिका ने कहा कि बच्चों ने ठीक से पानी नहीं डाला होगा।

मेरे लिए कौतूहल का विषय था कि इस बस्ती में किराए के घर में यह प्राइमरी स्कूल चल रहा था। घर से सटे एक अस्थाई टपरे में टॉयलेट बनाया है, वहाँ एक बाल्टी पानी रखा था। मैंने शिक्षिका से पूछा, क्या आप भी बच्चों के लिए बनाए इस टॉयलेट में ही जाती हैं?" उन्होंने कहा, "नहीं, हम घर से करके आते हैं (10:30

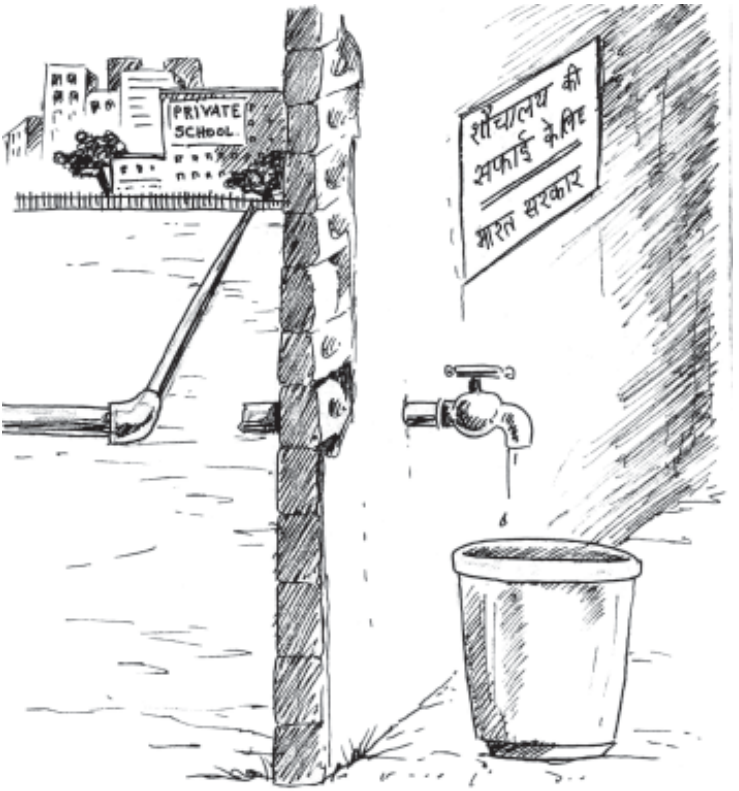

बजे), फिर घर जाकर ही करते हैं (4:30 बजे)। यदि इमरजेंसी हुई तब पास के घर में चले जाते हैं।" मैंने शिक्षिका से पूछा, "आपने इसके लिए कभी अपने ऊपर के अधिकारियों को नहीं कहा?" उन्होंने कहा, "इसमें कहना क्या है, जब वे निरीक्षण करने आते हैं तो स्वयं ही देखते हैं।"

दूसरे स्कूल की शिक्षिकाओं ने बताया कि वे स्कूल से लगे सुलभ शौचालय का इस्तेमाल करती हैं। स्कूल में शौचालय की साफ-सफाई के मद में पैसा नहीं है।

एनडीटीवी ने एक सर्वे में यह खुलासा किया है कि भारत में अधिकांश स्कूलों में शौचालय और पीने के पानी जैसी बुनियादी सुविधाओं की कमी है। शिक्षा का अधिकार (आरटीई) के क्रियान्वयन पर एनडीटीवी ने भारत के 13 राज्यों में 780 सरकारी स्कूलों का सर्वेक्षण किया। परिणाम बहुत शर्मनाक थे। उनमें से 63 प्रतिशत स्कूलों में कोई खेल का मैदान नहीं था। सर्वे किए गए स्कूलों में से एक

तिहाई से अधिक स्कूलों में शौचालयों की स्थिति बेहद खराब थी। ऐसी स्थिति में अगर किसी छात्र को शौचालय की ज़रूरत पड़ती है तो वह घर वापस चला जाता है। एनडीटीवी ने शौचालय की कमी और दुर्दशा को छात्राओं द्वारा अधिक संख्या में स्कूल छोड़ने का मुख्य कारण बताया।

सरकारी स्कूलों में शौचालय के नाम पर करोड़ों रुपए खर्च किए गए मगर हासिल क्या हुआ? अगर इस सवाल का जवाब ज़मीनी स्तर पर खोजने के लिए निकलें तो कई तरह के जवाब मिलेंगे। मसलन, बहुत-से स्कूलों में शौचालय में ताला लगा रहता है ताकि शिक्षक उसका इस्तेमाल कर सकें। बच्चों को स्कूल से बाहर या स्कूल की किसी दीवार के पीछे या पुराने खण्डहर जैसे शौचालय वाली दीवार के पास पेशाब के लिए जाना होता है।

बच्चों के 'आत्मसम्मान का सवाल'

जगज़ाहिर है कि स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों को शौच लगने की स्थिति में घर ही जाना होता है। कभी-कभार अगर किसी बच्चे का पेट खराब हो तो स्कूल में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि बच्चे का आत्मसम्मान दाँव पर लग जाता है।

"हमारे संविधान की धारा 395 कहती है कि राज्य का नीति निर्देशक सिद्धान्त यह सुनिश्चित करेगा कि बच्चे आदर और गरिमा के साथ जीवन जिएँ।" (प्रोफेसर कृष्ण कुमार ने बुनियादी शिक्षा पर दिए व्याख्यान में इसका ज़िक्र किया है।)

मध्य प्रदेश में विदिशा के एक सरकारी स्कूल में बच्चे का पेट खराब था। उसने पैंट में शौच कर दिया। वह शर्म के मारे काफी देर तक क्लास में बैठा रहा। बाकी बच्चे उसका मज़ाक उड़ा रहे थे। उससे बाहर जाने के लिए कह रहे थे, लेकिन वह शर्म और

संकोच के कारण उठ नहीं रहा था। थोड़ी देर बाद वह उठा और स्कूल के बगल की तरफ से भागते हुए अपने घर की तरफ गया। वह कई रोज़ तक स्कूल नहीं आया। ऐसी स्थिति में उस बच्चे के लिए बाकी बच्चों का सामना करना कितना मुश्किल रहा होगा, इस स्थिति के बारे में सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

स्कूल के खाते में पैसे हैं, मगर सफाई नहीं होती। स्कूलों में पेशाबघर की स्थिति ऐसी होती है कि आप वहाँ खड़े भी नहीं हो सकते। साफ-सफाई की स्थिति भले ही स्कूल के बाकी हिस्से में व्यवस्थिति हो मगर यह क्षेत्र उपेक्षा का शिकार दिखाई देता है।

समाज में शौचालय की इतनी दयनीय स्थिति कैसे है, इसका विश्लेषण करें तो पाएँगे कि हमारे समाज में अपने शरीर पर कभी खुलेपन से बातचीत ही नहीं की गई है। न ही स्कूल के अन्तर्गत ऐसे माहौल का निर्माण किया गया। मिडिल स्तर तक पाठ्यपुस्तकों में शारीरिक जानकारी दी गई है किन्तु उसमें किशोरों और किशोरियों में होने वाले परिवर्तन, उससे जुड़े मिथकों, मान्यताओं और धारणाओं पर कोई चर्चा ही नहीं की जाती है। शारीरिक गतिविधि एक नैसर्गिक प्रक्रिया है। उसे रोकने या खुले में जाने या गन्दे में जाने से शरीर पर क्या प्रभाव पड़ते हैं, इस पर कभी कोई चर्चा नहीं होती है। माहवारी के दौरान किशोरियों को अपने 'पैड' कितने अन्तराल से बदलना चाहिए, इस पर शिक्षिका भी चर्चा नहीं करती हैं और समाज तो इसे वैसे ही अन्धविश्वास और रूढ़ियों के साथ जोड़कर देखता है। जब इस मुद्दे को ज़रूरी ही नहीं समझा जाएगा तो इसकी आवश्यकता पर चर्चा भी नहीं होगी।

यदि बच्चे इस तनाव में रहते हैं कि ज़्यादा पानी पी लिया तो पेशाब के लिए जाना होगा या उसको रोके रखने के अप्राकृतिक तरीके आज़माते हैं तो क्या बच्चों के लिए यह न्यायोचित और स्वास्थ्यकर है? शौचालयों की कमी के साथ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की बातें केवल हमारी लफ्फाज़ी और जुमलेबाज़ी ही होगी।

कल्याणकारी राज्य की संकल्पना और भावी नागरिक, सरकार के दायित्व, और स्थानीय शासन के कार्य वाले पाठ्यपुस्तकीय अध्याय और इन पर आधारित कक्षा-कक्ष की चर्चाएँ – सब कुछ बेमानी-से लगने लगते हैं।

अंजना त्रिवेदी: अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, भोपाल में कार्यरत हैं।
सभी चित्र: निशित मेहता: महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी ऑफ वडोदरा से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातक। वर्तमान में महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी से कला का इतिहास विषय में स्नातकोत्तर कर रहे हैं।
यह लेख बच्चों और शिक्षिकाओं के अनुभव पर आधारित है।